ध्यान दें:

20

कपटी दुर्योधन का धर्माचरण

आप सब जानते ही हैं कपटी दुर्योधन ने जुए में छल से युधिष्ठिर को पराजित किया। परन्तु वह दुर्योधन यह जानता था कि वनवास के अन्त में युधिष्ठिर अपनी शक्ति से अपने राज्य को पुनः प्राप्त कर लेगा। इसलिए दया दक्षिणादि गुणों से अपनी कीर्ति को विस्तारित करते हुए युधिष्ठिर से भी उत्तम होने के लिए शक्ति अनुसार प्रयत्न करता है। इस प्रकार दुर्योधन ने अपने दुष्ट स्वभाव को छिपाने के लिए क्या-क्या किया, इत्यादि आप सब इस पाठ में पढ़ेंगे। और सेवक बन्धु आदि में उसका व्यवहार कैसा था। जो लोभी हैं वे सब विपक्षी नहीं हुए। और भी उस दुष्ट ने चारों पुरुषार्थ की किस प्रकार से सेवा की, जिसके द्वारा वे चारों पुरुषार्थ परस्पर अविरोधी थे। इस प्रकार आप सभी प्रश्नों के समाधान को प्राप्त करते हैं। उनके साथ राजनीति के चार प्रकार के उपायों साम, दान, दण्ड, भेद के विनियोग में दुर्योधन कैसा था यह भी आप सब जानेंगे। इस प्रकार अनेकों प्रकारों से वह दुष्ट युधिष्ठिर को पराभव के लिए इच्छा करता। परन्तु युधिष्ठिर जैसे सज्जन के साथ उस दुष्ट चरित दुर्योधन का विरोध कल्याणकारी नहीं है आपको इस पाठ में स्पष्ट होगा।

उद्देश्य

इस पाठ को पढ़कर आप सक्षम होंगे:

- कपटी दुर्योधन कैसी नीति मार्ग का अनुसरण करता है ऐसा जानने में;
- दुर्योधन प्रजाओं की प्रीति के लिए क्या-क्या करता है। ऐसा जानने में;
- दुर्योधन का राजनीतिक ज्ञान कैसा था यह भी जानने में;
- इस पाठ को पढ कर व्याकरण के ज्ञान में;
- और पद्य काव्य का निर्माण भी करने में;

20.1) मूल पाठः

विशङ्कमानो भवतः पराभवं नृपासनस्थोऽपि वनाधिवासिनः।
दुरोदरच्छद्मजितां समीहते नयेन जेतुं जगतीं सुयोधनः॥1.7॥

ध्यान दें:

तथापि जिह्मः स भवज्जिगीषया तनोति शुभ्रं गुणसम्पदा यशः।
समुन्नयन्भूतिमनार्यसंगमाद्वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः॥1.8॥

कृतारिषड्वर्गजयेन मानवीमगम्यरूपां पदवीं प्रपित्सुना।
विभज्य नक्तन्दिवमस्ततन्द्रिणा वितन्यते तेन नयेन पौरुषम्॥1.9॥

सखीनिव प्रीतियुजोऽनुजीविनः समानमानान्सुहृदश्च बन्धुभिः।
स सन्ततं दर्शयते गतस्मयः कृताधिपत्यामिव साधु बन्धुताम्॥1.10॥

असक्तमाराधयतो यथायथं विभज्य भक्तया समपक्षपातया।
गुणानुरागादिव सख्यमीयिवान्न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्परम्॥1.11॥

निरत्ययं साम न दानवर्जितं न भूरि दानं विरहय्य सत्क्रियाम्।
प्रवर्तते तसय विशेषशालिनी गुणानुरोधेन विना न सत्क्रिया॥1.12॥

वसूनि वाञ्छन्न वशी न मन्युना स्वधर्म इत्येव निवृत्तकारणः।
गुरूपदिष्टेन रिपौ सुतेऽपि वा निहन्ति दण्डेन स धर्मविप्लवम्॥1.13॥

20.2) मूल पाठ

विशङ्कमानो भवतः पराभवं नृपासनस्थोऽपि वनाधिवासिनः।
दुरोदरच्छद्मजितां समीहते नयेन जेतुं जगतीं सुयोधनः॥7॥

अन्वय- नृपासनस्थः अपि वनाधिवासिनः भवतः पराभवं विशंकमानः सुयोधनः दुरोदरच्छद्मजितां जगतीं नयेन जेतुं समीहते।

अन्वयार्थ- राजसिंहासन पर बैठा हुआ भी वन में निवास करने वाले आप से अर्थात् राजा युधिष्ठिर से पराजय की शंका करता हुआ धृतराष्ट्र का ज्येष्ठ पुत्र सुयोधन द्यूत क्रीड़ा के बहाने छल से जीती हुई पृथ्वी को नीति द्वारा जीतना चाहता है।

सरलार्थ- उस सम्राट राजा दुर्योधन ने द्यूत में कपट से राज्य को जीता। और कपट से छीने गए राज्य को उत्तम राजनीति से वश में करने की चेष्टा करता है। आप आजकल वन में रहते हैं। वनवास के अवसान पर आप पुनः जीतकर अपने राज्य को ग्रहण करेंगे इससे वह सदैव शंकित रहता है। इसीलिए वह नीति से जीतने का प्रयास कर रहा है। जिस कारण से आप अपने राज्य का पुनरुद्धार नहीं कर सकते हैं।

तात्पर्यार्थ- राजसिंहासन पर आरुढ़ वह दुर्योधन हमेशा युधिष्ठिर की पराजय का चिन्तन करता है। वह शौर्य से युधिष्ठिर को जीतने में असमर्थ है। ऐसा स्वयं जानता है। फिर भी न्याय से राष्ट्र का पालन करते हुए वश में करने की चेष्टा करता है। इत्यादि सब इस श्लोक में प्रतिपादित है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- समीहते - सम् + इह धातु, लट लकार।
- जेतुम् - जि धातु तुमुन् प्रत्यय
- नृपासनस्थः - नृपस्य आसनं। षष्ठी तत्पुरुष समास
- वनाधिवासिनः - वनम् अधिवसति।

- दुरोदरच्छद्मजिताम् - द्युतस्य कपटं जिताम्

सन्धि युक्त शब्द

- नृपासनस्थनोऽपि - नृपासनस्थः + अपि।

प्रयोग परिवर्तन-

- सुयोधनेन नृपासनस्थेनापि वनाधिवासिनः भवतः पराभवं विशंकमानेन दुरोदरच्छद्मजिता जगती नयेन जेतुं समीह्यते।

कोशः-

- जगती - त्रिष्वथो जगती लोको विष्टपं भुवनं जगत।

पाठगत प्रश्न-1

1. कौन भूमि को जीतना चाहता है?
2. राजसिंहासन पर बैठा दुर्योधन क्या शंका करता है?
3. सुयोधन किस उपाय से जगत को जीतना चाहता है?
4. दुर्योधन किससे पराजय की शंका करता है?
5. द्यूत में छल से जीती हुई पृथ्वी को किसने जीता?

मूल पाठ

तथापि जिह्मः स भवज्जिगीषया तनोति शुभ्रं गुणसम्पदा यशः।
समुन्नयन्भूतिमनार्यसंगमाद्वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः॥8॥

अन्वय- तथापि जिह्मः भवज्जिगीषया गुणसम्पदा शुभ्रं यशः तनोति। भूतिं समुन्नयन् महात्मभिः समं विरोधः अनार्यसंगमात् अपि वरम्।

अन्वयार्थ- फिर भी आप से पराजय की आशंका करते हुए भी वह कुटिल दुर्योधन आप को जीतने की इच्छा से अर्थात् आपको दया शौर्य आदि गुणों से जीतने की इच्छा से गुणों की गरिमा-वैभव के द्वारा निर्मल कीर्ति को फैलाता है। दानादि गुणों से तुम्हारी कीर्ति सम्पदा को आत्मसात् करने के लिए तुम्हारी अपेक्षा अपने गुणों को प्रकट करता है। ऐश्वर्य को बढ़ाने वाला महात्माओं के साथ विरुद्ध आचरण भी दुष्टों की मित्रता से अच्छा है।

सरलार्थ- आपके दया दक्षिणा आदि गुणों के कारण सारी प्रजा आपके प्रति अनुरक्त है। उसे देखकर दुर्योधन शंकित होता है कि वनवास से आकर आप पुनः अपने राज्य को प्राप्त करेंगे। इसीलिए जिससे प्रजा उसके अधीन रहें वैसा प्रयास करता है। उसी लिए वह अपने गुणों को अत्यधिक रूप से प्रकट करता है। और अपने यश को फैलाता है। क्योंकि दुष्टों से सम्पर्क की अपेक्षा महापुरुषों के साथ विरोध भी अच्छा है। जिससे वैभव उत्कर्ष जाता है।

तात्पर्यार्थ- प्रस्तुत इस श्लोक में दानादि सद्गुणों से राज्य पालन करते हुए अपनी कीर्ति को विस्तारित करता है यह प्रतिपादित किया गया है। उसका कारण है, जैसे प्रजा आपको उच्च दृष्टि से देखती

ध्यान दें:

पाठ-20

कपटी दुर्योधन का धर्माचरण

ध्यान दें:

है उसी समान उसे भी देखें। परन्तु अब भी दुशासन आदि दुष्टों के साथ को नहीं छोड़ता है। क्योंकि वे स्वभाव से ही दुष्ट है। इसीलिए आपकी तरह महात्माओं के साथ विरोध भी वह श्रेष्ठ ही मानता है।

व्याकरणात्कब टिप्पणी

- भवज्जिगीषया - जेतुम् इच्छा जिगीषा। भवतो जिगीषा।
- गुणसम्पदा - गुणानां सम्पद् गुणसम्पत्। षठी तत्पुरुष समास
- अनार्यसंगमात् - न आर्यः अनार्यः, अनार्यस्य संगमः अनार्यसंगमः। तस्मात् अनार्यसंगमात्।
- महात्मभिः- महान् आत्मा यस्य असौ महात्मा।
- तनोति - तन् धातु, लट् लकार।
- समुन्नयन - सम् + उत् + नी धातु, शतृ प्रत्यय।

सन्धि युक्त शब्द

- अनार्यसंगमाद्वरम् - अनार्यसंगमात् + वरम्।
- विरोधोऽपि - विरोधः + अपि।

प्रयोग परिवर्तन-

- तथापि जिह्मेन तेन भवज्जिगीषया गुणसम्पदा शुभ्रं यशः तन्यते। भूतिं समुन्नयता महात्मभिः समं विरोधेन अनार्यसंगमाद् वरेण भूयते।

कोशः

- भूतिः- विभूतिर्भूतिरैश्वर्यमणिमादिकमष्टधा।

पाठगत प्रश्न-2

6. कौन गुणों के वैभव से कीर्ति को फैलाता है?
7. महात्माओं के साथ विरोध भी दुष्टों की मित्रता से अच्छा है ऐसा कौन मानता है?
8. दुर्योधन किस लिए कीर्ति फैलाता है?
9. दुर्योधन क्या करके महात्माओं के साथ विरोध भी दुष्टों की मित्रता से अच्छा है ऐसा मानता है?
10. जिह्मः शब्द का क्या अर्थ है?

मूल पाठ

कृतारिषड्वर्गजयेन मानवीमगम्यरूपां पदवीं प्रपित्सुना।
विभज्य नक्तंदिवमस्ततन्द्रिणा वितन्यते तेन नयेन पौरुषम्॥9॥

अन्वय- कृतारिषड्वर्गजयेन अगम्यरूपां मानवीं पदवीं प्रपित्सुना अस्ततन्द्रिणा तेन नक्तन्दिवं विभज्य नयेन पौरुषं वितन्यते।

ध्यान दें:

अन्वयार्थ- काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य इन छः शत्रुओं को जीतकर सुविनीत से स्थित है। विनय ही प्रजा पालन का उपाय है। साधारण मनुष्यों के द्वारा अलभ्य दुष्प्राप्य है स्वरूप जिसका ऐसी दुर्लभ मानवी स्मृतिकार मनु के द्वारा बतलाई गई प्रजापालन की पद्धति को प्राप्त करने की इच्छा करने वाले उस दुर्योधन के द्वारा समाप्त हो गई है तन्द्रा जिसकी ऐसे आलस्यविहीन होकर दिन रात का विभाग करके उद्योग का विस्तार करता है।

सरलार्थ- काम, क्रोधादि छः शत्रुओं को विवेक से जीतकर मनु द्वारा कही गई प्रजापालन की नीतियों का पालन करता है। और उससे कीर्ति को प्राप्त करने की इच्छा करता है। इस समय में यह करना चाहिए, उस समय में वह करना चाहिए इस रीति से दिन को विभाजित करके उचित नियमों से सभी कार्यों को करता है। एवं आलस को त्याग कर प्रजाओं में अपने उद्योग को प्रदर्शित करता है।

तात्पर्यार्थ- प्रस्तुत इस श्लोक में दुर्योधन कैसे पुरुषार्थ को प्रदर्शित करता है इसका वर्णन गुप्तचर ने किया है। दुर्योधन ने छः शत्रुओं को जीतकर दिन को अलग-अलग भागों में विभक्त कर दिया। और मनु द्वारा कहे गए मार्ग को पकड़कर यथा समय कार्य को सिद्ध करता है। एवं सदैव नीति मार्ग का अनुसरण करके उद्योग को प्रदर्शित करता है। और वह अपने दुष्ट स्वभाव का भी गोपन करता है

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- कृतारिषड्वर्गजयेन- षण्णां वर्गः षड्वर्गः। अरीणां षड्वर्गः अरिषड्वर्गः। कृतः अरिषड्वर्गस्य जयो येन सः कृतारिषड्वर्गजयः।
- अगम्यरूपाम् - अगम्यं रूपं यस्याः सा।
- मानवीम् - मनो इयं मानवी।
- अस्ततन्द्रिणा - अस्ता तन्द्रिर्यस्य येन वा सः अस्ततन्द्रिः।
- पौरुषम् - पुरुषस्येदं पौरुषम्।
- विभज्य - वि + भज् धातु क्त्वा + ल्यप्।
- वितन्यते - वि + तन् धातु, यक् लट् लकार। प्रथम पुरुष, एकवचन

प्रयोग परिवर्तन

- कृतारिषड्वर्गजयः अगम्यरूपां मानवीं पदवीं प्रपित्सुः अस्ततन्द्रिः स पौरुषं नक्तन्दिवं विभज्य नयेन वितनोति।

अलंकार आलोचना-

- यहाँ कृतारिषड्वर्गजयेन, मानवीं पदवीं प्रपित्सुना, और अस्ततन्द्रिणा तीनों विशेषण के परस्पर आकांक्षा अभिप्राय से परिकर अलंकार है।

कोशः-

- पदवी- अयनं वर्त्ममार्गाध्वपन्थानः पदवी सृतिः।

  सरणिः पद्धतिः पद्या वर्त्तन्येकपदीति।

पाठ-20

कपटी दुर्योधन का धर्माचरण

ध्यान दें:

पाठगत प्रश्न-3

11. दुर्योधन किस नीति से उद्योग का विस्तार करता है?
12. दुर्योधन के द्वारा क्या करके उद्योग का विस्तार किया जा रहा है?
13. काम, क्रोधादि छः शत्रुओं के ऊपर विजय प्राप्त करने वाले कैसी पद्धति को प्राप्त करने की इच्छा करते हैं?
14. अस्ततन्द्रिणा इसका क्या अर्थ है?
15. उद्योग का नाम क्या है?

मूल पाठ

सखीनिव प्रीतियुजोऽनुजीविनः समानमानान्सुहृदश्च बन्धुभिः।
स सन्ततं दर्शयते गतस्मयः कृताधिपत्यामिव साधु बन्धुताम्॥10॥

अन्वय- गतस्मयः स सन्ततम् अनुजीविनः प्रीतियुजः सखीन् इव सुहृदः च बन्धुभिः समानमानान् बन्धुतां कृताधिपत्याम् इव साधु दर्शयते।

अन्वयार्थ- विनष्ट हो गया है अभिमान जिसका ऐसा अभिमान रहित वह दुर्योधन सदैव सेवकों को स्नेहयुक्त मित्रों के समान, और मित्रों को बन्धुजनों की तरह समान सम्मान वाले भाई की तरह देखता है। बन्धुजनों को राज्य ग्रहण किए हुए अधिपति के समान अच्छी तरह से देखता है।

सरलार्थ- वह राजा दुर्योधन अंहकार को त्यागकर सेवकों को राजा के मित्र के समान मानता है। और वे अनुचर राजा को सखा मानते हैं। राजा दुर्योधन भी उनके साथ वैसा ही व्यवहार करता है। जो राजा के मित्र है उनको भाई के समान सत्कार वाला मानते हैं, राजा भी उनके साथ भाई के समान व्यवहार करता है। अपने भाई को राज्य के अधिपति के समान मानते है। इसी प्रकार वह अपनी साधुता प्रकट करता है।

तात्पर्यार्थ- इस श्लोक में सेवक और बन्धुओं के प्रति दुर्योधन का केसा व्यवहार है, वर्णित किया गया है। वह दुर्योधन अभिमान को त्यागकर सदैव सेवकों के साथ मित्र के समान आचरण करता है। सेवकों के प्रति उसके स्नेह को प्रदर्शित करता है। बन्धुओं के साथ सदैव भाई के समान आचरण करता है। इसीलिए बन्धुओं में भाइयों के समान सत्कार को करता है। और भाइयों के साथ इसी प्रकार आचरण करता है जिससे व्यक्ति सोचें कि उसने भाइयों में सब कुछ अर्पित कर दिया है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- गतस्मयः - गतः स्मयो यस्य स गतस्मयः। बहुव्रीह समास।
- प्रीतियुजः - प्रीत्या युंजन्ति ये ते प्रीतियुजः, तान् प्रीतियुजः।
- अनुजीविनः - अनु पश्चात् धावनेन जीवनं येषां तेऽनुजीविनः।
- समानमानान् - समानः मानो येषां ते समानमानाः।
- कृताधिपत्याम् - अधिपतेः कर्म आधिपत्यम्।

ध्यान दें:

सन्धि युक्त शब्द

- प्रीतियुजोऽनुजीविनः - प्रीतियुजः + अनुजीविनः। प्री + क्तिन्, युघ + क्विप्
- सुहृदश्च - सुहृदः + च।

प्रयोग परिवर्तन-

- गतस्मयेन तेन सन्ततम् अनुजीविनः प्रीतियुजः सखायः इव दर्श्यन्ते। सुहृदः बन्धुभिः समानमाना इव दर्श्यन्ते। बन्धुता कृताधिपत्या इव साधु दर्श्यते।

अलंकार आलोचना-

- यहाँ छेकानुप्रास अलंकार है। वहाँ सकार और नकार की बार-बार आवृत्ति के कारण।

कोशः-

- सखा - वयस्यः स्निग्धः सवया अथ मित्रं सखा सुहृत्।

पाठगत प्रश्न-4

16. यहाँ कौन अभिमान रहित है?
17. वह सेवकों को किसके समान देखता है?
18. वह मित्र को किस रूप से देखता है?
19. वह बन्धु समूह को कैसे दिखलाता है?
20. समानमानान् इसका क्या अर्थ है?

मूल पाठ

असक्तमाराधयतो यथायथं विभज्य भक्तया समपक्षपातया।
गुणानुरागादिव सख्यमीयिवान्न बाधतेऽस्य त्रिगणः परस्परम्॥11॥

अन्वय- यथायथं विभज्य समपक्षपातया भक्तया असक्तम् आराधयतः अस्य गुणानुरागात् सख्यम् ईयिवान् इव त्रिगणः परस्परं न बाधते।

अन्वयार्थ- ठीक-ठीक उचित प्रकार से विभाजन करके धर्म अर्थ काम के मध्य में, इस समय में धर्म, इस समय में अर्थ, इस समय में काम इस प्रकार विभाग करके समान रूप से प्रेम से भक्ति से आसक्ति रहित होकर सेवन करते हुए इस दुर्योधन का तीन (धर्म अर्थ काम का समूह) गुणों के प्रति अनुराग होने से मित्रता को प्राप्त हुआ जैसा एक दूसरे को पीड़ित नहीं करते हैं।

सरलार्थ- वह धर्म, अर्थ और काम का समान रूप से सेवन करना चाहिए इस वचन को नहीं अपनाता है। वह राजा धर्म, अर्थ, काम का उचित रूप से विभाजन करके उचित समय पर उसका उपभोग करता है। अर्थात जिस समय में जो पुरुषार्थ सेवित है तब उसका ही उपभोग करना अन्यथा नहीं। वे सभी पुरुषार्थ उस दुर्योधन में बिना कठिनाई के रहते हैं। इसीलिए उसके धर्म अर्थ और काम सदैव ही अत्यधिक वृद्धि को प्राप्त करते हैं।

पाठ-20

कपटी दुर्योधन का धर्माचरण

ध्यान दें:

तात्पर्यार्थ- प्रस्तुत इस श्लोक में अनासक्त दुर्योधन कैसे समानुरागी पुरुषार्थों का सेवन करता है उसे ही वर्णित किया गया है। धर्म, अर्थ, और काम ये पुरुषार्थ परस्पर विरोधी है। फिर भी राजा दुर्योधन उनके सेवन के समय को विभाजित करके उनका अनासक्ति से सेवन करता है। वे सभी पुरुषार्थ उस दुर्योधन में बिना बाधा के रहते हैं। अर्थात् धर्माचरण के समय में अर्थ और काम धर्म को नहीं रोकते हैं। धनोपार्जन के समय में धर्म और काम अर्थ को नहीं रोकते। एवं काम सेवन के समय में धर्म और अर्थ भी काम को नहीं रोकते।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- समपक्षपातया - समः पक्षपातो यस्यां सा समपक्षपाता
- गुणानुरागात् - गुणेषु गुणानां वा अनुरागो।
- त्रिगणः - त्रयाणां गणः।
- आराधयतः - आ + राध् धातु + णिच् + शतृ।
- भक्त्या - भज् धातु क्तिन् प्रत्यय तृतीय एकवचन।

सन्धि युक्त शब्द

- गुणानुरागादिव - गुणानुरागात् + इव।
- बाधतेऽस्य - बाधते + अस्य।

प्रयोग परिवर्तन

- यथायथं विभज्य समपक्षपातया भक्तया असक्तम् आराधयतः अस्य गुणानुरागात् सख्यम् ईयुषा त्रिगणेन परस्परं न बाध्यते।

कोशः-

- असक्तम् - अनासक्तमसक्तं च पृथग्वर्ति पृथग् स्थितम्।
- यथायथम् - यथार्थं तु यथायथम्।

पाठगत प्रश्न-5

21. आसक्ति रहित होकर सेवन करते हुए किन तीन का समूह एक-दूसरे को बाधा नहीं पहुँचाता?
22. दुर्योधन कैसी भक्ति से आसक्ति रहित होकर सेवन करता है?
23. दुर्योधन क्या एक-दूसरे को बाधा नहीं पहुँचाता?
24. त्रिगण का क्या नाम है?
25. दुर्योधन को त्रिवर्ग के प्रति अनुराग होने से क्या प्राप्त हुआ?

पाठ-20

कपटी दुर्योधन का धर्माचरण

ध्यान दें:

मूल पाठ

निरत्ययं साम न दानवर्जितं न भूरि दानं विरहय्य सत्क्रियाम्।
प्रवर्तते तसय विशेषशालिनी गुणानुरोधेन विना न सत्क्रिया॥12॥

अन्वय- तस्य निरत्ययं दानवर्जितं साम, न प्रवर्तते। सत्क्रियां विरहय्य भूरि दानं न प्रवर्तते। विशेषशालिनी सत्क्रिया गुणारोधेन विना न प्रवर्तते।

अन्वयार्थ- उस दुर्योधन का निष्कपट मधुर वचन साम दान रहित नहीं होता। उसका प्रचुर दान सत्कार के बिना प्रवृत्त नहीं होता। उसका विशेष रूप से सुशोभित होने वाली गुणों विद्या, सदाचार इत्यादि सद्गुणों के अनुराग के बिना प्रवृत्त नहीं होती है।

सरलार्थ- उस राजा दुर्योधन की साम नीति दान के बिना प्रवृत्त नहीं होती है। इसी प्रकार उस दुर्योधन का प्रशंसनीय सत्कार अनुराग के बिना प्रवृत्त नहीं होता है। अर्थात् उसकी सामनीति धन से युक्त है। जिसके ऊपर वह प्रसन्न होता है उसको धन देता है। और धन को सम्मानपूर्वक देता है न कि निरादर पूर्वक। अर्थात् गुणी पुरुष का ही वह सत्कार करता है न कि निर्गुणी का।

तात्पर्यार्थ- यहाँ इस श्लोक में 'राजनीति में चार प्रकार के साम, दान, दण्ड, भेद उपायों के विनियोग में दुर्योधन कुशल था' ऐसा जानते हैं। वह दुर्योधन जिस किसी के ऊपर प्रसन्न होकर वार्तालाप करता है। वहाँ वार्तालाप का फल माधुर्य ही नहीं है उसे धन भी देता है। आदर के बिना दान विफल है इसीलिए उचित प्रकार से सत्कार करके धन को देता है। वह जिस किसी का भी सत्कार करता है, एवं जो सत्कार योग्य गुणवान व्यक्ति वैसे ही करता है। अन्य उसकी नीतिकुशलता से परिचित होता है।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- निरत्ययम् - निर्गतः अत्ययो यस्मात् तद्।
- दानवर्जितम् - दानेन वर्जितम्। तृतीया तत्पुरुष समास
- सत्क्रियाम् - सती चासौ क्रिया सत्क्रिया।
- गुणानुरोधेन - गुणानाम् अनुरोधः।
- प्रवर्त्तते - प्र + वृत्त धातु लट् लकार।

प्रयोग परिवर्तन

- तस्य निरत्ययेन साम्ना दानवर्जितेन न प्रवृत्यते। सत्क्रियां विरहय्य भूरिणा दानेन न प्रवृत्यते। गुणानुरोधेन विना विशेषशालिन्या सत्क्रियया न प्रवृत्यते।

अलंकार आलोचना

- यहाँ पूर्व पूर्व वाक्य के प्रति दूसरे दूसरे वाक्यों के विशेषण है इस कारण से एकावली नामक अलंकार है।

कोशः-

- अत्ययः - अत्ययोऽतिक्रमे कृच्छ्रे दोषे दण्डेऽप्यथापदि।

ध्यान दें:

पाठगत प्रश्न-6

26. दुर्योधन का निर्बाध साम कैसे प्रवृत्त नहीं होता है?

27. उसका प्रचुर दान कैसे प्रवृत्त नहीं होता?

28. उसका आदर कैसा है?

29. सत्कार कैसे प्रवृत्त नहीं होता?

30. यहाँ साम इसका क्या अर्थ है?

मूल पाठ

वसूनि वाञ्छन्न वशी न मन्युना स्वधर्म इत्येव निवृत्तकारणः।
गुरूपदिष्टेन रिपौ सुतेऽपि वा निहन्ति दण्डेन स धर्मविप्लवम्॥13॥

अन्वय- वशी सः दुर्योधनः, वसूनि वांछन् न, मन्युना न, निवृत्तकारणः सन् स्वधर्मः एव एषः इति गुरूपदिष्टेन दण्डेन रिपौ वा सुते अपि धर्मविप्लवं निहन्ति।

अन्वयार्थ- जितेन्द्रिय वह दुर्योधन धन प्राप्त करने की इच्छा से नहीं, न ही क्रोध से, लोभ, क्रोध इत्यादि कारणों से रहित होकर, अपना धर्म है इसी रूप से गुरुओं के द्वारा उपदिष्ट दण्ड के द्वारा शत्रु अथवा मित्र में स्थित धर्म के उल्लंघन को दूर करता है। धर्म के उल्लंघन को दण्ड से निवृत्त करता है।

सरलार्थ- जितेन्द्रिय वह दुर्योधन धन प्राप्त करने की इच्छा से नहीं और न ही क्रोध से दण्ड देता है। अपितु लोभ, क्रोध इत्यादि कारणों से रहित होकर राजा यह मेरा धर्म है कि दण्डियों को दण्ड और अदण्डियों को क्षमा ऐसा मानकर धर्म का आचरण करता है। इसीलिए गुरुओं के द्वारा उपदिष्ट दण्ड के द्वारा शत्रु अथवा अपने पुत्र में स्थित धर्म के उल्लंघन को अर्थात् अधर्म को निवृत्त करता है।

तात्पर्यार्थ- इस श्लोक में राजा दुर्योधन की दण्डनीति की प्रशंसा की गई है। वह दुर्योधन दण्डनीति के प्रयोग में कुशल है। स्वयं जितेन्द्रिय, वह शत्रु को, पुत्र को दोनों को समान देखता है। एवं वह दण्डनीति में उचित प्रयोग से धर्म के उल्लंघन को नष्ट करके धर्म की रक्षा करता है। प्रजा के प्रति उसकी दृष्टि पक्षपात रहित है। धन लोभ से अथवा क्रोध से वह कभी भी किसी को दण्ड नहीं देता। अपितु धर्म की रक्षा के लिए इस भावना से वह अपराधियों को दण्ड देता है। कभी निर्दोष व्यक्ति को नहीं।

व्याकरणात्मक टिप्पणी

- निवृत्तकारणः - निवृत्तानि कारणानि यस्मात् सः।
- गुरूपदिष्टेन - गुरुणा उपदिष्टः तेन।
- धर्मविप्लवम् - धर्मस्य विप्लवः धर्मविप्लवः तम् ।
- निहन्ति - नि + हन् धातु, लट् लकार, प्रथम पुरुष एकवचन।
- वशी - वश् धातु इन् प्रत्यय प्रथमा एकवचन।

ध्यान दें:

सन्धि युक्त शब्द

- वांछन्न - वांछन् + न।
- सुतेऽपि - सुते + अपि।

प्रयोग परिवर्तन

- वशिना तेन , वसूनि वांछता न, मन्युना न, स्वधर्म एव इति निवृत्तकारणेन दुर्योधनेन गुरूपदिष्टेन दण्डेन रिपौ सुते अपि धर्मविप्लवो निहन्यते।

अलंकार आलोचना-

- यहाँ वृत्ति अनुप्रास अलंकार है। तकार की बार बार आवृत्ति के कारण।

कोशः -

- कारणम् हेतुर्ना कारणं बीजं निदानं त्वादिकारणम।

पाठगत प्रश्न-7

31. जितेन्द्रिय दुर्योधन क्या नष्ट करता है?
32. और वह क्या करते हुए नष्ट करता है?
33. वह किसकी सहायता से धर्म के उल्लंघन को नष्ट करता है?
34. वह किस में धर्म उल्लंघन को नष्ट करता है?
35. यहाँ मन्यु शब्द का क्या अर्थ है?

पाठ सार

उस सम्राट राजा दुर्योधन ने द्यूत में छल से राज्य को जीता। कपट से प्राप्त राज्य को उत्तम राजनीति से वश में करने की चेष्टा करता है। आप आजकल वन में रहते हैं। वनवास खत्म होने पर आप पुनः जीतकर अपने राज्य को ग्रहण करोगे। इससे वह सदैव शंकित रहता है। इसीलिए नीति बल से वश में करने का प्रयत्न करता है। जिससे आप अपने राज्य का पुनरुद्धार न कर सके। आपके दया दानादि गुणों से सभी प्रजा आपके प्रति अत्यधिक अनुरागी है। उसे देखकर दुर्योधन शंकित है, कि वनवास से वापिस आकर आप पुनः अपने राज्य को ग्रहण करेंगे। इसीलिए प्रजा जैसे उसके अधीन हो उसके लिए प्रयत्न करता है। वैसे ही अपने गुणों को अतिशय से प्रकट करता है। और अपने यश की कीर्ति करता है। क्योंकि दुर्जन के सम्पर्क की अपेक्षा महात्माओं के साथ विरोध भी अच्छा है। जिससे वैभव उत्कर्ष जाता है। काम क्रोध आदि छः शत्रुओं को विवेक से जीतकर मनु के द्वारा उपदिष्ट नीति से प्रजाशासन का पालन करता है। और उससे यश प्राप्ति की इच्छा करता है। इस समय में यह करना चाहिए, उस समय में वह करना चाहिए इस प्रकार से दिन को विभाजित करके उचित प्रकार से सारे कार्य को करता है। एवं आलस्य रहित होकर प्रजाओं में अपने उद्योग को प्रदर्शित करता है। वह राजा दुर्योधन अहंकार को त्यागकर सेवकों को साथ मित्र के समान मानता है। और वे सेवक राजा को सखा मानते हैं। राजा दुर्योधन भी उनके साथ वैसा ही व्यवहार करता है। एवं बन्धुओं को उसके भाई के समान मानता है। राजा भी उनके साथ भातृतुल्य

पाठ-20

कपटी दुर्योधन का धर्माचरण

ध्यान दें:

व्यवहार करता है। अपने भाई को राजा के समान मानता है। एवं वह अपनी साधुता को प्रकट करता है। वह धर्म, अर्थ, और काम का समान रूप से सेवन करना चाहिए इस वचन का अवलम्बन नहीं करता। वह राजा धर्म, अर्थ, काम का सम्यक् विभाग करके उचित समय पर उसका सेवन करते है। अर्थात् जिस समय में जो पुरुषार्थ सेवित है तब उसका ही सेवन करता है अन्यथा नहीं। इसीलिए वे सभी पुरुषार्थ उस दुर्योधन में बिना बाधा के ही रहते हैं। इसीलिए उसके धर्म, अर्थ, काम सदैव अत्यधिक वृद्धि को प्राप्त करते है। उस राजा दुर्योधन की साम नीति धन दान के बिना प्रवृत्त नहीं होती। उसका प्रचुर धन वितरण भी सत्कार के बिना प्रवृत्त नहीं होता। इसी प्रकार उस दुर्योधन का प्रशंसनीय सत्कार अनुराग के बिना प्रवृत्त नहीं होता। अर्थात् उसकी सामनीति धन युक्त है। जिसके ऊपर वह प्रसन्न होता है उसे धन को देता है। और धन को सम्मानपूर्वक देता है न कि निरादर करके। अर्थात् गुणी पुरुषों का ही वह सत्कार करता है न कि निर्गुणी का। जितेन्द्रिय वह दुर्योधन न तो धन प्राप्त करने की इच्छा से और न क्रोध से कोई भी दण्ड देता है। किन्तु लोभ आदि कारण से रहित होकर यह मेरा धर्म है की दण्डियों को दण्ड और अदण्डियों को क्षमा ऐसा मानकर धर्म का आचरण करता है। इसीलिए गुरुओं के द्वारा बताए गए दण्ड से शत्रु अथवा अपने मित्र में स्थित धर्म का उल्लंघन अर्थात् अधर्म को नष्ट करता है।

पाठान्त प्रश्न

1. मनवी पद्धति का क्या नाम है?
2. शत्रुषड्वर्ग कौन-से हैं?
3. कैसे दुर्योधन का त्रिवर्ग एक-दूसरे को बाधित नहीं करता?
4. मानवीय पद्धति को प्राप्त करने की इच्छा करने वाले दुर्योधन से किसके जैसा यत्न विधीत है?
5. युधिष्ठिर को नीति से जीतने के लिए दुष्ट दुर्योधन ने क्या किया?
6. दुर्योधन की साम दान आदि प्रयोग नीति कैसी थी?
7. उस दुर्योधन की दण्ड विधि केसी थी इसका वर्णन करे?
8. समानार्थक धातु रूप को मिलाइए।

क-स्तम्भ	**ख-स्तम्भ**
1. बाधते	क. निवारयति।
2. तनोति	ख. बोधयते।
3. निहन्ति	ग. विस्तारयति।
4. समीहते	घ. प्रभवति।
5. प्रवर्तते	ङ प्रतिबध्नाति।
6. दर्शयते	च. चेष्टते।

उत्तराणि

1. ङ 2. ग 3. क
4. च 5. घ 6-ख।

ध्यान दें:

आपने क्या सीखा

1. दुर्योधन कैसे कपट से प्रजा को वश में करता है इस पाठ से जान चुके हैं।
2. राजा दुर्योधन राजनीति में कुशल था यह भी जान चुके हैं।
3. राज कार्य में दण्डनीति कैसी होनी चाहिए स्पष्ट होता है।
4. यदि राजा दुष्ट हो तो प्रजा की क्या अवस्था होती है ऐसा जानते हैं।
5. कैसे पदों का सन्धिविच्छेद करते हैं इस पाठ से समझा।
6. नए शब्दों के साथ उनके अर्थों का भी परिचय प्राप्त हुआ।

पाठगत प्रश्नों के उत्तर

उत्तर-1

1. दुर्योधन
2. पराजय को
3. नीति द्वारा
4. वन में निवास करने वाले युधिष्ठिर से।
5. भूमि को

उत्तर-2

6. दुर्योधन
7. दुर्योधन
8. आप को (युधिष्ठिर) जीतने की इच्छा से
9. ऐश्वर्य को बढ़ाता हुआ
10. प्रतारक:

उत्तर-3

11. दुर्योधन से
12. रात और दिन का विभाजन करके
13. दुर्लभ मनु द्वारा उपदिष्ट पद्धति को
14. आलस्य रहित
15. उद्योगकार

उत्तर-4

16. दुर्योधन
17. मित्रों के समान स्नेह युक्त

ध्यान दें:

18. भाई तुल्य
19. अच्छे राज्य के स्वामी के समान
20. बन्धुओं के समान

उत्तर-5

21. दुर्योधन का
22. समान रूप से
23. त्रिवर्ग
24. धर्म, अर्थ, काम
25. मित्रता को

उत्तर-6

26. दान रहित नहीं
27. आदर के बिना
28. विशेष रूप से सुशोभित होने वाली
29. गुणों के अनुराग के बिना
30. मधुर वचन को

उत्तर-7

31. धर्म के उल्लंघन को
32. धन को न चाहता हुआ
33. गुरुओं के द्वारा उपदिष्ट दण्ड से
34. शत्रु और मित्र में
35. क्रोध